*International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)*
*ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714*
*www.ijhssi.org ||Volume 7 Issue 04 Ser. I || April 2018 || PP 61-64*

# "दक्षिण भारत में दक्खिनी हिन्दी भाषा और साहित्य: एक संक्षिप्त अवलोकन"

-डॉ. दयानंद शास्त्री
गुलबर्गा (कर्नाटक)

**प्रस्तावनाः**

हिन्दी को राष्ट्र भाषा का सार्थक गौरव तभी प्राप्त होगा जब वह राष्ट्रव्यापी स्वरूप से अपने को सजायेगी। हिन्दी अपने राष्ट्रीय विशेषता को तभी सफ़ल बना सकती है। जब वह अपने राष्ट्रीय व्यक्तित्व को अपने भीतर समाने में समर्थ हो। हिन्दी का राष्ट्रीय व्यक्तित्व हिन्दी प्रदेश की जनता का व्यक्तित्व ही नही वरन् भारत वर्ष के समस्त जन समुदाय का सम्मिलित व्यक्तित्व है। आज समय की यह बहुत बड़ी माँग समझी जा रही है कि युगों पहले दक्षिण भारत में निर्मित हिन्दी साहित्य का अध्ययन अनुशिलन अत्याधिक हो। दक्षिण की तेलुगू, तमिल, कन्नड़ और मलयालम् भाषाओं के बीच में हिन्दी साहित्य सृजन का माध्यम बनकर विकास करती आ रही है। जिस प्रकार उत्तर में अवधि, ब्रजभाषा में हिन्दी काव्य गंगा की पोषक धाराएँ बनकर बहती रहीं, ठिक उसी प्रकार दक्षिण भारत में प्रचलित दक्खिनी हिन्दी को पुष्ठ करनेवाली बलवती सरिता के रूप में स्वीकारी गयी है।

दकन या दक्खिन शब्द संस्कृत से उद्भव हुआ माना जाता है। कहा जाता है कि, जब आर्य लोग उत्तर और पश्चिम प्रदेशों को पार करके पंजाब पहुँचे तो, उनके सीधे हाथ की तरफ जो भौगोलिक क्षेत्र दिखाई पड़ा उसे उन्होंने दक्षिण कहा। प्राकृत में यह दक्षिण से रूप परिवर्तित होकर दक्खिन शब्द बन गया। अरबी और पारसी में इसे दकन कहा गया है। दक्खिन प्रदेश की सीमाओं के संबंध में डॉ. हेमचंद्र राय चौधरी ने इस प्रकार की जानकारी दी। "दक्खिनी शब्द से तात्पर्य उस ऐतिहासिक भू-भाग से है, जो सह्याद्री पर्वत माला से दक्षिण की तरफ फैला हुआ है। और जिसकी श्रृंखला को ही महेन्द्रगिरी से मिलाकर महानदी और गोदावरी के आवरीज बनाता हुआ, यह भाग दक्षिण में कृष्णा और तुंगभद्रा नदी तक व्याप्त हुआ है।"1

दक्खिनी हिन्दी के उद्भव के संबंध में चर्चा करते हुए डॉ. श्रीराम शर्मा ने लिखा है"दक्खिनी शब्द से वर्तमान बरार, हैदराबाद राज्य, महाराष्ट्र और मैसूर राज्य का बोध होता है। इस प्रदेश की गोदावरी और कृष्ण दो प्रधान नदीयाँ है।"2

दक्खिनी हिन्दी इन्हीं प्रदेशों में विकसित हुई। दोनों आलोचकों की विचारधारा में समानता पाते हैं। दक्षिण के केरल प्रान्त के साथ अरबों का समुद्री व्यापारिक संबंध वर्षों पुराना है किन्तु, राजनैतिक दृष्टि से मुसलमानों के साथ दक्षिण भारत का संबंध बहुत दिनों बाद स्थापित हुआ ऐसा इतिहास बताता है। अरबों के आगमन से दक्षिण भारत के इतिहास में जो परिवर्तन हुआ, वह दक्खिन के राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

**दक्खिनी हिन्दी भाषा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः**

हजरत मोहम्मद के धार्मिक उपदेश केवल अरब प्रदेश में सिमीत न रहकर संसार के हर कोने में पहुँच गये। इन उपदेशों का मूलमंत्र था- समत्व, भातृत्व एवं एकता। भारत के इतिहास में दिल्ली के सुल्तान मोहम्मद बिन-तुघलक एक विशेष व्यक्तित्व लेरक हमारे सामने आते है। राजनीति की दृष्टि से उनका निर्णय भले ही गलत रहा हो लेकिन दक्खिनी भाषा और साहित्य के बीज वास्तव में दक्षिण में पढे इसका श्रेय भी उन्हीं को जाता है। सन् १३२७ देवगिरी महाराष्ट या दौलताबाद में स्थानांतरण किया। राजनैतिक दृष्टि से इनका यह

कदम असफ़ल माना गया। लेकिन उन्होंने दक्खिन में अपने समुदाय के लोगों को बसाकर हिन्दू धर्म के आक्रमण से राज्य की रक्षा करने के उद्देश्य से उन्होंने अपने साथ दिल्ली के उलेमा और सुफ़ी फकीरों को बड़ी संख्या में दौलताबाद लाने का प्रशंसनीय कार्य किया है। उनसे पहले भी उत्तर के सुफी संत निजामुद्दीन चिश्ती की प्रेरणा से ४०० से भी अधिक सुफी पहले ही धर्म प्रचार के उद्देश से दक्षिण में आ बसे थे।

तुगलक के सामंतों में वापस दिल्ली जाने के बादशाह के निर्णय का असमर्थन किया और विद्रोह करके दक्षिण में बहमनी साम्राज्य की नींव रखी। जो २०० सौ वर्षों तक यहाँ शासन करते रहे ऐसा इतिहास बताता है। बहमनी राज्य की स्थापना से दक्खिनी हिन्दी भाषा पनपने के लिए वातावरण और सुदृढ मिल गया। क्योंकि-बमनी शासकों ने इनको राज्याश्रय दिया। इस समय सूफी साधक और धर्म प्रचारक राज्याश्रय का संबल पाकर अपने सिध्दान्त के प्रचार में और सक्रियता से जुड़ सके। दक्षिण भारत की मुसलमानों रियासतों, उनके शासकों एवं उनके दरबार के साहित्यकारों, सूफी-फकीरों एवं दरवेशों के व्यवहारिक जीवन में उत्तर भारत की खड़ीबोली काम आने लगी। धीरे-धीरे व्यवहारिक भाषा के स्तर से ऊपर उठकर साहित्य के क्षेत्र में प्रविष्ठ हई। १५वीं, १६वीं, १७वीं शताब्दी में निरंतर प्रवाहित होकर एक उत्कृष्ठ भाषा के रूप में उभरी।

दक्खिनी भाषा का साहित्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। दक्खिनी हिन्दी में सर्व प्रथम ख्वाजा बंदे नवाज, गेसुदराज ने अपने विचार व्यक्त किये। सूफी आचार्यों ने हिन्दू-मुस्लिम विचारधारा का समन्वयात्मक विचार प्रस्तुत किया। इसका विश्लेषण करते हुए डॉ. मुहम्मद कुंज मेत्तरजी ने लिखा है- "जो खड़ी-बोली उत्तर में उपेक्षित हो गई वह दक्षिण में विकास की चरमोन्ति तक पहुँच गई। मसनबी कदमराव पद्मराव, ईर्शादनामा, गुलशने इश्क आदि काव्य दक्षिण मे हुये। यह हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास के दस्तावेज है। राष्ट्र भाषा हिन्दी के स्वरूप को निर्माण करने में दक्खिनी हिन्दी के साहित्यकारों का योगदान ऐतिहासिक महत्व रखता है। दक्खिनी हिन्दी साहित्य को अरबी, फ़ारसी लिपी में देखकर उसे उर्दू समझना गंभीर भुल होगी। हमें चाहिए कि दक्खिनी के सम्पूर्ण साहित्य को नागरी लिपी में मिलाने का ठोस कार्य करें। आगे चलकर उन्होंने कहा वेदान्त और इस्लामी विचारों का सामंजस्य करते हुये दक्खिनी के सूफ़ी आचार्यों ने सामाजिक, संस्कृति, आदर्श स्वरूप प्रस्तुत किया है यदि सूफ़ीयों का समन्वयात्मक कार्य न होता, तो निश्चय ही हिन्दू-मुस्लिम समुदाय विपरीत ध्रुवों में खड़े रह जाते। सूफ़ी आचार्यों ने दानों धर्मों की बातों को आमने-सामने रखते हुये जन-सामान्य को यह दिखा दिया कि धर्म की मूलभूत विचारधारा दोनों में एक सी है।"3 दक्खिनी हिन्दी और सूफ़ी साहित्यः दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी साहित्य का मूल संबंध हिन्दी सूफ़ी साहित्य से ही है। दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी साहित्यकारों का प्रभाव परवर्ती हिन्दी सूफ़ी साहित्यकारों पर अवश्य रहा। जायसी कृत पद्मावत का दक्खिनी हिन्दी में भी अनुकरण हुआ। वैसे सूफ़ी साहित्य का निर्माण भारत की प्रायः सभी प्रमुख भाषाओं में पर्याप्त मात्र में हुआ है। यह एक ऐसी साहित्यिक धारा थी जो कश्मीर से कन्याकुमारी तक निर्बाध गती से बहती रही। दक्षिण भारत की सर्व प्रथम तमिली भाषा में सूफ़ी साहित्य निर्मित हुआ जैसे उत्तर के हिन्दी के सूफ़ी कवियों को हम सांस्कृतिक समन्वय और सामंजस्य के साहित्यकार मानते है वैसे ही दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी साहित्यकारों का भी मानने में हमें कोई आपत्ती होनी चाहिए। दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी कवियों की सांस्कृतिक देन उत्तर के सूफ़ी कवियों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। विदेशी भाव को भी अपने देश के अनुरूप बदल देने में इन कवियों की अद्भूत क्षमता थी। फ़ारसी कथानकों को भारतीय परिवेश में समन्वित करनके प्रस्तुत करने का प्रशंसनीय कार्य इन कवियों ने किया है। जब हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने सिध्दान्तों की कट्टरता पर स्थिर थे ऐसे संक्रमण समय में भारत में सूफ़ीयों का आगमन शांती का संदेश लेकर आ गया।

**हिन्दी का संत साहित्य और दक्खिन का सूफ़ी काव्यः**

जिस प्रकार कबीर, ज्ञानेश्वर, नामदेव, गुरूनानक जैसे संतों ने ऊँच-नीच की भावना को मिटाने का बाहरी आचरण तथा कर्मकाण्ड का विरोध किया। शुध्द चारित्रिक सदाचार पर जोर दिया। उसी प्रकार दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी कवियों ने कुरआन और भारतीय वेदान्त दोनों का सुंदर समन्वय करते हुए प्रेम मार्ग, सत्य

मार्ग, हृदय की स्वच्छता पर बल देते हुये अपने काव्य के माध्यम से उभरकर आये। दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी कवि उत्तर के सूफ़ी कवियों से किसी दृष्टि से पीछे नही हैं। ख्वाजा बंदे नवाज अपने सिध्दान्तों का प्रचार अरबी और फ़ारसी में करते थे लेकिन जनसाधारण को समझाने के लिए दक्खिनी हिन्दी का प्रयोग उन्होंने किया है। ऐसा नहीं है कि, दक्खिनी हिन्दी साहित्य के विकास में मुसलमान सूफ़ी कवियों ने ही योगदान दिया है। मुसलमान कवियों की संख्या भले ही अधिक हो दक्षिण के निर्गुण भक्त कवि संत नामदेव, एकनाथ, संत ज्ञानेश्वर जैसे कवि भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। संत ज्ञानेश्वर में सन् १२९० इसवी में गीता पर जो टीका लिखी उसका नाम ज्ञानेश्वरी है। इसमें दक्खिनी भाषा की झलक मिलती है। उदाहरण के लिए उनका एक पद
"निर्गुण ब्रह्म भुवन से न्यारा, पाथी पुस्तक भय अपारा। कोरा कागज पढकर जाये, लेना एक और देना दोय।।"4
संत एकनाथ भी अपनी काव्यधारा में इस प्रकार ईश्वर का वर्णन करते हैं -

"अल्ला रखेगा वैसा ही रहना, मौला रखेगा वैसा ही रहना।
कोई दिन शक्कर, दूध-मलिदा, कोई दिन अल्ला माँगता गया।।"

इसपद में वे कहते हैं कि-ईश्वर जिस प्रकार से हमें रखना चाहता है वैसे ही रहकर हमें जीवन गुजारना चाहिए। निर्गुण भक्त और सूफ़ी कवियों की विचारधारा में समान तत्व पाये जाते है। यह समानता भाषा और भाव दोनों स्तर पाई जाती है। कर्मकाण्ड की निन्दा करते हुये कबीर ने कहा -

केसन कहा बिगारीया, जो मूड़ों सौ बार।
मन को काहे न मँडीओं, जामें विषम विकार।

इसी बात को दक्खिनी सूफ़ी कवि मिरांजी कहते है - लूँचत मुंडत फिर, फोकट तीरथ करें या हज धान देख, जे भान भई मुरक भज। इसका तात्पर्य यही है कि, तीर्थयात्रा करने से या बालों को मुंडवाने से ईश्वर प्राप्त नहीं होता। सच्ची भक्ति पर उन्होंने जोर दिया है। इस तरह से अपनी आध्यात्मिक, आंतरिक अनुभूति को दक्खिनी सूफ़ी कवियों सरलता से अभिव्यक्त किया है। हम देखते हैं कि भाषा और भाव उत्तर हो या दक्षिण सब जगह समान मूल्य रखते हैं। सूफ़ी साहित्य की अंतरधारा एक है, उसका राग भी एक है। कवियों की अपनी अलग-अलग विशेषताएँ, उनके अपने मौलिक गुण साहित्य में उभरकर आते हैं। दक्खिनी का सूफ़ी साहित्य उत्तर के सूफ़ी साहित्य का बाधक बनकर नहीं साधक बनकर उभरा है। यह मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का सौभाग्य माना जाता है कि, उसकी एक सशक्त धारा अहिन्दी प्रदेश में भी अबाध रूप से बहती आ रही है। दक्खिनी भाषा साहित्य का वर्णन करते हुये डॉ. मुहम्मद कुंज मेत्तर जी ने कहा है- "हिन्दी भाषा और साहित्य के सहृदय काव्य रसियों को प्रेम की संजीवनी पिलानेवाले दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी साहित्यकार सदैव अमर रहेंगे।"5

**उपसंहारः**

दक्खिनी हिन्दी सूफ़ी साहित्य में हिन्दी तथा भारतीय साहित्य की वे सारी परम्परायें सुरक्षित है तथा इन भारतीय परम्परा का विदेशी परम्पराओं के साथ सुंदर संयोग हुआ है। हिन्दी में शोक गीत लिखने की परम्परा आधुनिक मानी जाती हैं किन्तु दक्खिनी हिन्दी के सूफ़ी कवि शेख बुराहनुद्दीन जानम ने अपने पिता मिरांजी जो दक्खिनी हिन्दी के प्रसिध्द साहित्यकार माने जाते हैं उनके निधनपर शोक गीत लखा है जिससे मर्सिया कहा जाता है। हिन्दी का सर्वप्रथम शोक गीत माना जाता है। इन कवियों के शोक गीत साहित्यिक दृष्टि से अत्यंत उच्च कोटी के माने गये है।

भारतीय संगीत को भी दक्खिनी हिन्दी सूफ़ी कवियों की देन अविस्मरणीय मानी गयी है। सूफ़ीयों में समा- अथवा संगीत सभा का विशेष महत्व है। विशेषकर माना जाता है कि, चिश्ती परम्परम्परा के सूफ़ी संतों ने भारतीय संगीत को और समृध्द किया है। स्वयं ख्वाजा बंदे नवाज जी ने दक्खिनी भाषा में गेय गीत लिखे है। जानम ने भी विविध रागों में अनेक गीत लिखे हैं। दक्खिन सूफी मत को लोकप्रिय बनाने का श्रेय मिरांजी

तथा उनके पुत्र जानम को जाता है। मिरांजी ने हिन्दी को अपने विचारों का माध्यम बनाया। उन्होंने हिन्दी में लिखने का अपना उद्देश्य इस प्रकार बताया है वे अरबी बोल न जायें, न फारसी पछाने, यूँ देखत हिन्दी बोल, पन मानी है नप तोल। काझी मुहम्मद बहरी, कुतुबुद्दीन कादरी, फिरोज बिदरी, शेख अश्रफ, अब्दूल वजही आदि सूफ़ी के श्रेष्ठ साहित्यकार माने जाते हैं। अनेक गज़ल संग्रह भी इस समय लिखे गये। गद्य और पद्य दोनों ही विधाओं में यह साहित्य सक्रीय चलता रहा है। हिन्दी साहित्य जगत सदैव दक्खिनी हिन्दी साहित्यकारों का ऋणी रहेगा।

**डॉ. दयानंद शास्त्री**
**सहायक प्राध्यापक**
**एन.व्ही. पदवी महाविद्यालय, कलबुरगि**
**(गुलबर्गा-कर्नाटक)**

**संदर्भ ग्रंथः**

१. डॉ. हेमचंद्रराय चौधरी: अर्ली हिस्ट्री ऑफ़ द डेक्कन - पृ.सं.३
२. डॉ. श्रीराम शर्मा: दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास - पृ.सं. ११
३. डॉ. मुहम्मद कुंज मेत्तर: दक्खिनी हिन्दी भाषा और साहित्य - पृ.सं. २५
४. डॉ. इक्बाल अहमद: दक्खिनी साहित्य का आलोलचनात्मक इतिहास - पृ.सं. ९५
५. डॉ. मुहम्मद कुंज मेत्तर: दक्खिनी हिन्दी भाषा और साहित्य (विकास की दिशाएँ) - पृ.सं. ११५